इकाई 30 राष्ट्रवाद का उदय

इकाई की रूपरेखा

30.0 उद्देश्य
30.1 प्रस्तावना
30.2 पृष्ठभूमि
30.3 राष्ट्रवाद का उत्थान
30.3.1 साम्राज्यवाद का प्रतिरोध
30.3.2 राष्ट्रवाद और राष्ट्र-निर्माण
30.3.3 मांचू-विरोधी भावनाएँ
30.4 राष्ट्रवाद : क्रांति के उपरांत के प्रारंभिक वर्ष
30.4.1 शांतुंग समस्या और चार मई का आंदोलन
30.4.2 बौद्धिक प्रतिक्रिया और जन-विरोध
30.4.3 युद्ध सामंतवाद और चीन की एकता को खतरा
30.4.4 चीनी राष्ट्रवाद के अतिरिक्त प्रभाव
30.5 सारांश
30.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

30.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप यह व्याख्या कर पाएंगे कि :

- चीन में आधुनिक राष्ट्रवाद की भावना का उदय किस प्रकार हुआ,
- बीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों के चीनी राष्ट्रवाद के क्या तत्व थे,
- चीन में राष्ट्रवादी और राष्ट्रभक्तिपूर्ण आंदोलन.भड़काने में जापानी साम्राज्यवाद ने क्या भूमिका निभाई, और
- इस पुनरूद्धारित राष्ट्रवाद के क्या परिणाम रहे।

30.1 प्रस्तावना

इस इकाई में चीन में राष्ट्रवाद के विकास में योगदान करने वाले कारकों की व्याख्या की गई है। हम पहले के खंडों में इस बात पर चर्चा कर ही चुके हैं कि चीन ने साम्राज्यवादी ताकतों के हाथों किस तरह संकट झेले। इसके परिणामस्वरूप विदेश-विरोधी और मांचू-विरोधी भावनाएँ उभरीं। इससे राष्ट्रवादी भावनाओं को मज़बूती मिली। मांचू शासन को 1911 की क्रांति में उखाड़ फेंका गया। लेकिन विदेशियों के हाथों होने वाले शोषण की समस्या और प्रतिद्वंद्वी गुट और सत्ता के लिए होने वाले संघर्ष अब भी बने हुए थे। इसी स्थिति में राष्ट्रवादी भावनाओं ने एक निश्चित आकार लेना शुरू किया और वे और भी मज़बूत हो गईं। इस इकाई में इन्हीं बिन्दुओं पर चर्चा की गई है।

30.2 पृष्ठभूमि

"राष्ट्रवाद" का विचार या "राष्ट्रत्व" अथवा "राष्ट्र-राज्य" की अवधारणाओं ने चीनी जनता की चिंतन प्रक्रिया में अपना स्थान यूरोप की अपेक्षा कहीं बाद में बनाया। वास्तव में, पश्चिम के साथ चीनियों का परिचय बढ़ने के साथ ये विचार और अवधारणाएँ स्पष्ट और निश्चित हो गईं। शताब्दियों तक विश्व में अपने स्थान को लेकर अथवा कथित चीनी विश्व व्यवस्था के विषय में चीनियों का दृष्टिकोण शेष विश्व के दृष्टिकोण से मेल नहीं

खाता था। फिर भी, यह दृष्टिकोण शताब्दियों तक अक्षुण्ण बना रहा क्योंकि चीनी लोग शेष विश्व से कट कर रहते थे। व्यापार के अतिरिक्त चीनियों ने भौगोलिक रूप से दूर देशों के साथ और कोई व्यवहार नहीं रखा। अपने परिक्षेत्र में आने वाले समाजों के साथ चीनी राज्य का संबंध केवल "नज़राने" या कर का था। इस व्यवस्था के तहत छोटे राज्य चीनी सम्राट को नज़राने के तौर पर तमाम किस्म के उपहार देते थे, जिसके बदले में चीनी साम्राज्य उन पर आधिपत्य नहीं करता था। चीनी दृष्टिकोण से यह और सब पर चीनी साम्राज्य और सम्राट की श्रेष्ठता की अभिव्यक्ति थी।

परंपरा से चीनी लोग विश्व को जिस रूप में देखते थे, उसमें चीन, अर्थात् **चुंग-कुओ** या मध्यवर्ती राज्य और चीन के परिक्षेत्र में आने वाले दूसरे खानाबदोश आते थे। दूसरे शब्दों में, और अनेक सभ्य प्रजातियों की तरह, चीनी भी यह विश्वास करते थे कि वे पृथ्वी और मानव आवास के केंद्र थे। सम्राट "स्वर्ग का पुत्र" था, जो न केवल चीनी जनता से बल्कि चीनी भूमि के आसपास रहने वाले तमाम लोगों से भी श्रेष्ठ था। एक स्पष्ट सीमा वाले राष्ट्र-राज्य की धारणा चीनियों के लिए तब जाकर अस्तित्व में आई, जब अंतर्राष्ट्रीय कानून की पश्चिम की अवधारणाओं को उन पर लागू किया गया, बल्कि थोपा गया। पश्चिमी प्रभाव के परिणामस्वरूप चीन को जो आघात झेलने पड़े, उनमें से एक विश्व व्यवस्था के विषय में उनके विचारों का पूरी तौर पर बदलना भी था। चीनियों को एक स्पष्ट सीमा वाले, स्वाधीन राज्य की यूरोपीय धारणा को स्वीकार करना ही पड़ा।

चीन को प्रारंभ में यूरोपीय विश्व व्यवस्था को स्वीकार करने में जो कठिनाई हुई, उसे देखते हुए जॉन किंग फेअर बैंक, जैसे अनेक विद्वानों ने चीन को चीन-केंद्रित राष्ट्र की संज्ञा दे दी। इसका अर्थ यह हुआ कि चीनी एक ओर विदेश-भय के शिकार थे और दूसरी ओर स्वयं को अन्य देशी और सभ्यताओं से श्रेष्ठ समझते थे। लेकिन, इस दृष्टिकोण को दूसरे विद्वानों ने चुनौती दी है। इसके विपक्ष में प्रमाण देते हुए ये विद्वान कहते हैं कि यदि चीनी लोग इतने ही अंध-राष्ट्रभक्त थे जो उन्होंने बौद्ध धर्म को कैसे अपना लिया और कैसे अपने अनुकूल ढाल लिया, जबकि यह एक विदेशी धर्म था। भारत और चीन के बीच पारंपरिक संबंधों में चीनियों के चीन-केंद्रित होने का कोई स्पष्ट संकेत नहीं मिलता।

बहस को एक तरफ रख दिया जाए तो यह बात सामने आती है कि चीनी राष्ट्रत्व की भावना ने चीनी राष्ट्र को तब अपनी जद में लिया जब 1840 के अफीम युद्ध में इंगलैंड के हाथों उसकी हार हो गई। राष्ट्रवाद उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम वर्षों और बीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों तक चीन के राजनीतिक परिदृश्य में एक महत्वपूर्ण तत्व बन गया था। आगे के अनुच्छेदों में हम इस बात पर चर्चा करेंगे कि चीन में राष्ट्रवाद का उदय कैसे हुआ, इसने अपने आपको किस प्रकार अभिव्यक्त किया और इसका प्रसार होने के क्या परिणाम हुए। पृष्ठभूमि के तौर पर प्रारंभिक बीसवीं शताब्दी के चीनी इतिहास के जाने-माने विद्वान अमेरिकी चीनविद् मैरी सी. राइट के निष्कर्षों को भी लिया गया है।

30.3 राष्ट्रवाद का उत्थान

चीन में राष्ट्रवाद के तीन विभिन्न लेकिन परस्पर संबंधित तत्व रहे :

i) पहले, राष्ट्रवाद का अर्थ होता था साम्राज्यवाद का विरोध और उससे संघर्ष करना।

ii) दूसरे, राष्ट्रवाद एक ऐसे मज़बूत, आधुनिक और केंद्र-केंद्रित राष्ट्र-राज्य की मांग करता था जो न केवल साम्राज्यवाद को पीछे धकेल दे, बल्कि देश के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन में उसकी नई आकांक्षाओं को आगे भी बढ़ाए।

iii) तीसरे, राष्ट्रवाद का अर्थ होता था मांचू (चिंग) वंश को उखाड़ फेंकना।

इन तीन तत्वों में से, साम्राज्यवाद का विरोध निश्चित रूप से सबसे महत्वपूर्ण था।

30.3.1 साम्राज्यवाद का प्रतिरोध

बीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में, "प्रभुसत्ता के अधिकारों की बहाली" प्रत्येक प्रबुद्ध चीनी का आदर्श वाक्य बन गया। उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक "राष्ट्रीय प्रभुसत्ता" और "प्रभसत्ता के अधिकार" जैसे पश्चिमी शब्द सरकरी दस्तावेजों में आ गए थे। कुछ ही

वर्षों में वे चीनी शब्द भंडार के अभिन्न अंग बन गए। अफीम युद्ध के समय से, चीन पर बाहरी आक्रमण होते रहे। प्रत्येक युद्ध का अंत एक असमान संधि के साथ हुआ। चीन को विजेता ताकतों को हर्जाने, विशेषाधिकार और क्षेत्रीय रियायतें तक देनी पड़ीं। 1894-95 के चीन-जापान युद्ध ने चीन की कमज़ोरी का पूरा पर्दाफाश कर दिया, वह किसी को किसी बात के लिए भी इंकार नहीं कर सका। इस युद्ध का तुरंतगामी परिणाम "रियायतों के लिए होड़ या भगदड़" के रूप में सामने आया। बॉक्सर विद्रोह को कुचलने के आठ राष्ट्रों के अभियान के बाद चीन में कुछ साम्राज्यवादी ताकतों की निरंकुश लूटमार देखने में आती है। चीन के अतिक्रमण रोक पाने में असमर्थ होने के बावजूद, इस समय देश को मजबूत करने और तमाम हाथ से निकली चीज़ों को फिर से अपने हाथ में लेने के बारे में चीन में कहीं अधिक दृढ़ संकल्प की स्थिति थी। अवमानना या मान-हानि की स्थिति के साठ वर्षों का हिसाब तो चुकता होना ही था।

बीसवीं शताब्दी के पहले दशक में चीनी अधिकारियों ने अंग्रेजों पर रोक लगाने के लिए तिब्बत पर केवल आधिपत्य का ही नहीं बल्कि अपनी प्रभुसत्ता या सर्वसत्ता का भी दावा पेश किया। रूस ने मंचूरिया पर कब्ज़ा कर लिया था, लेकिन 1905 में जापान के हाथों हार जाने के बाद इसकी ताकत कम पड़ गई। चीनियों ने समय नहीं गंवाया। उन्होंने मंचूरिया में प्रवास की गति बढ़ा दी और वहां प्रशासनिक तंत्र की फिर से संरचना की। उनका ध्येय जापान के विस्तार को रोकना था। रूस ने क्योंकि अपना ध्यान अब मंगोलिया पर लगा लिया था, चीन ने इसकी प्रतिक्रिया में अपने इस अधीनस्थ राज्य पर पूरी प्रभुसत्ता जमा दी। यह उसने इस प्रकार किया :

- मंगोलिया में चीनियों के प्रवास को बढ़ावा देकर,
- स्थानीय अधिकारियों को रूसी प्रभाव को समाप्त करने का आदेश देकर,
- योग्य और आधुनिक मानसिकता वाले अधिकारियों के अधीन एक चीनी किस्म का प्रशासन कायम करके, और
- चीनी छावनी की सेनाओं को बाहर भेजकर।

चीनी सरकार ने ये उपाय इस व्यापक भय के कारण किए थे कि चीन का बंटवारा होने की आशंका थी।

आम जनता में भी पश्चिम और जापान के मंसूबों की तीखी प्रतिक्रिया हुई। स्थानीय और राष्ट्रीय समाचार-पत्रों में इन मुद्दों पर चर्चा हुई। अनेक जगहों पर प्रदर्शन और सभाओं के माध्यम से विदेशी ताकतों के मंसूबों की निंदा की गई। गानों और नाटकों के माध्यम से भारत में अंग्रेज़ों और हिंद-चीन में फ्रांसीसियों के अत्याचारों को दिखाया गया। इस तरह के गानों और नाटकों की प्रस्तुतियाँ दक्षिण चीन में आम हो गईं। इश्तिहारों और दूसरे प्रचार माध्यमों से चीनी राष्ट्रवाद के संदेश का प्रसार किया गया।

अधिक जबरदस्त विरोध "बहिष्कार अधिनियम" के विरोध में 1905 का अमेरिका-विरोधी बहिष्कार और 1908 में **तात्रू मार** कांड को लेकर होने वाला जापान-विरोधी बहिष्कार थे। इन बहिष्कारों ने यह दिखा दिया कि चीनी सौदागर और मज़दूर अपने राष्ट्रवादी उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए भौतिक त्याग करने को भी तैयार थे। विशेष विदेशी अधिकारों और क्षेत्रीयता की समाप्ति क्रांतिकारियों, सुधारकों और मांचू सरकार की मांग थी।

30.3.2 राष्ट्रवाद और राष्ट्र-निर्माण

राष्ट्रवाद केवल साम्राज्यवाद का विरोध ही नहीं था, बल्कि इसमें प्रांतवाद और क्षेत्रवाद पर विजय भी निहित थी। पतनशील मांचू शासन ने जो सुधार के प्रयास किए उनके एक अंग के रूप में चीन में सुकियांग को छोड़कर और सभी जगहों पर प्रांतीय सभाएं कायम कीं गईं। ये सभाएँ वाद-विवाद और विचार-विमर्श का मंच बन गईं और इन्होंने राष्ट्रभक्त लोगों को एक जगह पर लाने का काम किया। एक जाने-माने लेखक के अनुसार, इस प्रांतवाद ने "राष्ट्रवाद के उदय को सुगम बनाया"। अनेक स्थानीय मुद्दों पर जो विचार-विमर्श चला उससे साम्राज्यवाद के प्रतिरोध से संबंधित मुद्दों की ओर ध्यान देने की स्थिति बनी। उदाहरण के लिए, क्वांगतुंग प्रांत के स्वशासन संघ ने जब एक अंग्रेज़ी नदी गश्ती दल के आने पर आपत्ति की तो उससे समूची संधि व्यवस्था को चुनौती देने की स्थिति बनी। इसी तरह, स्थानीय सौदागरों की अपने व्यापार को फैलाने की इच्छा ने एक

समान राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की मांग को जन्म दिया। राष्ट्रवादी भावना ने राष्ट्र-निर्माण की आवश्यकता को जन्म दिया, जिससे यह मांग बनी कि चीन एक एकीकृत, मज़बूत राष्ट्र बन जाए।

30.3.3 मांचू-विरोधी भावनाएँ

सन् 1644 से चीन पर राज करने वाला चिंग वंश प्रजाति या नस्ल की दृष्टि से उन हान चीनियों से भिन्न था जो देश की आबादी का 4 प्रतिशत थे। चिंग वंश के लोग मंचूरिया प्रांत की मांचू प्रजाति के थे जो कि संख्या की दृष्टि से नगण्य थे। वंश कमज़ोर होने लगा तो वंश-विरोधी भावनाएँ जातीय अर्थों में अभिव्यक्त की जाने लगीं, जबकि क्रांतिकारी राष्ट्रवाद ने चीन को अपनी जद में लिया तो इसका एक तत्व था विदेशी मांचू राज के प्रति चीनी जातीय विरोध, क्योंकि वह घरेलू नीतियों में तो प्रतिक्रियावादी था और विदेशी मामलों में कायरतापूर्ण। अनेक हान चीनियों का विश्वास था कि देश पर क्योंकि एक गैर-हान वंश राज कर रहा था इसलिए उसमें हान लोगों की इच्छा और जुनून नहीं था, इसलिए वह इतनी दयनीयता के साथ आधिपत्य स्वीकार कर लेता था।

यह कहना सही न होगा कि मांचू शासक दूसरों से पूरी तौर पर कटे रहे। इसके विपरीत, चिंग दरबार में बड़ी संख्या में हान चीनी शामिल थे और साम्राज्यवाद को दूर-दराज के क्षेत्रों से जोड़ने वाली देश की लोक सेवा में हान चीनियों का बोलबाला था। चीन पर कथित चीनी मांचू कुलीन वर्ग का राज था। इस गुट में प्रतिक्रियावादी भी थे और सुधारक भी और प्रचंड साम्राज्यवाद विरोधी भी थे तो समझौतावादी भी। लेकिन, आम विश्वास यह भी था कि सम्राट व्यवस्था अपने आप में अपर्याप्त थी, इसलिए जातीय मुद्दे पर आवश्यकता से अधिक ज़ोर नहीं ही देना चाहिए। एक साधारण-सी मांचू-विरोधी भावना थी तो लेकिन यह कुछ छोटे भौगोलिक क्षेत्रों और क्रांतिकारी संगठनों की उन शाखाओं में ही अधिक मुखर थी जो सामाजिक विप्लव की मांग नहीं करते थे। इसी तरह, कुछ गुप्त संघों (Secret Societies) और सुमद्र पारीय चीनी समुदायों ने यह नारा लगाया : "मांचुओं को उखाड़ फेंको, चीनियों को वापस लाओ"।

मांचू-विरोधी भावना की तीव्रता अलग-अलग समय और अलग-अलग स्थानों पर भिन्न-भिन्न रही। अनेक मामलों में इस नकारात्मक धारणा का उदय पहले राष्ट्रत्व की अपेक्षाकृत अधिक सकारात्मक भावना में रूपांतरित होने के लिए हुआ। एक बात निश्चित है कि मांचू-विरोध ने चीनियों को इतना एकजुट नहीं किया, जितना कि साम्राज्यवाद-विरोध ने।

बोध प्रश्न 1

1) चीनी विश्व व्यवस्था से आप क्या समझते हैं? लगभग 10 पंक्तियों में समझाइए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2) चीन में राष्ट्रवाद का क्या अर्थ होता था? लगभग 10 पंक्तियों में इसकी विभिन्न विवेचनाएँ लिखिये।

....
....
....

....
....
....
....
....
....
....

30.4 राष्ट्रवाद : क्रांति के उपरांत के प्रारंभिक वर्ष

सन् 1911 में चिंग वंश के पतन के साथ ही चीनी राष्ट्रवाद का मांचू-विरोधी तत्व स्पष्ट तौर पर निरर्थक हो गया। लेकिन उसके दो और तत्व– साम्राज्यवाद विरोध और राष्ट्र-निर्माण की इच्छा– और भी प्रमुख हो गए। उत्तर-चिंग काल के प्रारंभिक वर्षों में चीन में दो प्रमुख राजनीतिक शक्तियाँ थीं :

- एक तो थे सैन्यवादी; युआन शिकाइ राजनीति में सक्रिय, सेना का प्रमुख व्यक्ति था, और
- दूसरे वह गुप्त संघ (Secret Society) था जो बाद में राजनीतिक दल–**कुओमिंतांग** बन गया।

इन दो संगठित राजनीतिक गुटों के अतिरिक्त कुछ क्रांतिकारी संगठन भी थे, जिनका राष्ट्र की राजनीति में कोई प्रभाव नहीं था और अनेक आधुनिक बुद्धिजीवी थे। वे पश्चिमी शिक्षा से प्रभावित होते हुए भी घोर राष्ट्रवादी थे। राष्ट्रवाद की इस लहर को सत्ता में बैठे लोग अनदेखा नहीं कर सके, विशेष तौर पर 1916 से अर्थात् युआन शिकाइ की मृत्यु के बाद के दौर में यही स्थिति रही। 1917 आते-आते चीन विश्व युद्ध में कूद चुका था और उसे ये आशाजनक संकेत मिल चुके थे कि यदि युद्ध में उसके पक्ष की विजय हुई तो उसे बड़े राष्ट्रीय लाभ दिए जाएंगे। जर्मन मंत्री रींश (Reinsch) के साथ शुरुआती दौर की सौदेबाज़ी में न केवल ऋणों के बारे में, बल्कि बॉक्सर विद्रोह से संबंधित हर्जानों के बारे में भी विचार-विमर्श हुआ। जापान के साथ भी बातचीत का स्वरूप इस प्रकार का रखा गया कि लाभ चीन को ही मिले। इसमें मंचूरिया और बाहरी मंगोलिया में चीन की अपनी स्थिति को फिर से दावे के साथ रखने की इच्छा भी शामिल थी। दूसरा लक्ष्य शायद यह था कि युद्ध में मित्र राष्ट्रों के साथी जापान की ओर से आने वाले दबावों को ढील दी जाए। चीन की स्पष्ट इच्छा यह थी कि राष्ट्रों के समुदाय में उसे बराबरी का दर्जा दिया जाए।

30.4.1 शांतुंग समस्या और चार मई का आंदोलन

विश्व युद्ध के बाद चीन की सबसे पहली अपेक्षा यह थी कि पहले जर्मनी और ऑस्ट्रिया का "असमान संधियों" के तहत जो अधिकार और विशेषाधिकार दिए गए थे उन्हें वह वापस ले लेगा। विशेष तौर पर, वह चाहता था कि जर्मनी के "प्रभाव क्षेत्र" शांतुंग पर अपनी सर्वसत्ता बहाल कर ले। 1898 के पट्टे के अनुसार शांतुंग में जर्मनी के अधिकार 99 वर्षों के लिये थे। प्रभुसत्ता अस्थाई तौर पर जर्मनी को दी तो हुई थी लेकिन उस पर चीन का अधिकार आरक्षित था। इसलिए तर्क की कसौटी पर कोई भी उत्तराधिकारी ताकत जर्मनी से अधिक अधिकारों को हासिल नहीं कर सकती थी। इसके अतिरिक्त, मूल समझौते में यह उल्लेख था कि जर्मनी अपने पट्टे का अधिकार किसी और ताकत के हाथ में नहीं दे सकता, और जर्मनी द्वारा इस अधिकार को छोड़े जाने की स्थिति में सारे अधिकार कानूनन प्रभुसत्ताधारी शक्ति चीन को ही वापस हो जाएंगे।

जापान ने जब युआन शिकाइ की सरकार पर इक्कीस मांगे थोपीं तो इस कानूनी स्थिति में एक नया तत्व शामिल हो गया; एक औपचारिक संधि में चीन ने यह वचन दिया था कि जर्मनी और जापान के बीच शांतुंग में जर्मनी के अधिकारों के निपटारे को लेकर जो भी सहमति होगी उसे चीन स्वीकार करेगा। चीनियों ने इसका विरोध किया कि यह समझौता चीन पर जबरन थोपा गया था और इसलिए यह आवश्यक नहीं था कि उसे माना ही जाए। अंतर्राष्ट्रीय कानून में, यह समझौता बिल्कुल भी वैध नहीं था, यद्यपि 1915 में

अमेरिकी विदेश मंत्री ब्रायन ने यह इशारा कर दिया था कि अमेरिका जापान के विरूद्ध चीन के साथ था। राष्ट्रपति वुडरो विल्सन ने भी अपने भाषणों में कह दिया था कि शांति के लिए होने वाली बातचीत में क्षेत्र से संबंधित समझौतों में आबादियों के हितों को ध्यान में रखा जाएगा और यह केवल शत्रु ताकतों के बीच कोरा समायोजन या समझौता नहीं होगा। स्वाभाविक था, चीन ने यह आशा बांधी कि शांति सम्मेलन में अमेरिका शांतुंग प्रायद्वीप की बहाली के चीन के दावे का समर्थन करेगा। जब 1919 में पेरिस में शांति सम्मेलन शुरू हुआ, जिसके परिणामस्वरूप अंत में वर्साय की संधि हुई तो जापानियों को यह विश्वास हो चला कि शांतुंग की प्रभुसत्ता उनके हाथों में दे दी जाएगी। उन्होंने यह माना कि शांतुंग की स्थिति की पुष्टि केवल 1915 के चीन-जापान समझौते ने ही नहीं, बल्कि 1917 के अंग्रेज़ी, फ्रांसीसी और इतालवी समझौते ने भी कर दी थी।

जनवरी के अंतिम दिनों में शांतुंग की समस्या सामने आई। जापानी इस प्रायद्वीप की मांग कर रहे थे और चीन उसे नकार रहा था। जापानी प्रतिनिधिमंडल ने सम्मेलन में फ्रांस, इंगलैंड और इटली की ओर से जापान को गुप्त रूप से दिए गए वचनों के प्रमाण रखे और इससे भी अधिक महत्व के वे दस्तावेज़ रखे जिनमें चीनी सरकार ने जापान को गुप्त आश्वासन दिए थे। पीकिंग सरकार ने एक ऐसे गुप्त समझौते पर हस्ताक्षर किए थे, जिससे इस बात की पुष्टि होती थी कि चीन को शांतुंग प्रांत में दो नए रेल पथों की वित्त व्यवस्था, निर्माण और संयुक्त कार्यों के जापान के प्रस्ताव मंजूर थे। इसका परिणाम यह हुआ कि इन गुप्त समझौतों और वचनों की बात सामने आते ही चीनियों का पक्ष शुरुआती दौर में ही कमज़ोर और पूर्वग्रह से ग्रस्त पड़ गया।

अप्रैल में, जब बातचीत चल रही थी, चीन ने सम्मेलन में दो स्मरण पत्र पेश किए। एक में मई 1915 की संधि और जापान के साथ उससे संबंधित समझौते को रद्द करने की मांग थी। दूसरे में ये प्रस्ताव थे :

1) प्रभाव या हित-क्षेत्रों को छोड़ना,
2) विदेशी सेनाओं और पुलिस की वापसी,
3) विदेशी डाकघरों और तार एजेंसियों को हटाना,
4) क्षेत्रातीत अधिकार क्षेत्र की समाप्ति,
5) पट्टे वाले क्षेत्रों को छोड़ना,
6) चीन को विदेशी रियायती क्षेत्रों और बस्तियों की वापसी, और
7) चीन को शुल्क दरों की स्वायत्ता वापस करना।

दूसरे शब्दों में, चीन अंतर्राष्ट्रीय समुदाय से यह मांग कर रहा था कि असमान संधियों को यदि पूरी तौर पर समाप्त नहीं किया जाता तो कम से कम उन्हें सरल किया जाए। लेकिन सम्मेलन ने इन दोनों ही स्मरण पत्रों को यह कहकर अस्वीकार कर दिया कि ये उसके संदर्भ नियमों के बाहर थे। फिर भी, इन मांगों में चीन में उठी राष्ट्रवाद की तेज़ लहर से बनने वाली चीनी गरिमा की चिंता दिखाई देती थी।

अप्रैल 19, 1919 को जब अमेरिका, इंगलैंड, फ्रांस, इटली और जापान के विदेश मंत्रियों की परिषद् के सामने शांतुंग का मसला लाया गया तो अमेरिकी प्रतिनिधि मंडल ने यह सुझाव दिया कि शांतुंग के अधिकार पहले इन पाँचों ताकतों के हाथों में दिए जाएं, और ये ताकतें अंत में इन अधिकारों को चीन को वापस कर देंगी। जापान ने इस सुझाव को अस्वीकार कर दिया। इंगलैंड, फ्रांस और इटली जापान का समर्थन करने को वचनबद्ध थे। अमेरिका भी अपने सुझाव पर जम नहीं पाया। इसका एक कारण यह था कि वह यूरोपीय मित्र राष्ट्रों से टकराव नहीं चाहता था, और एक कारण यह था कि वह इंगलैंड और इटली के साथ साइबेरिया में फंसा था। अंत में निर्णय यह हुआ कि शांतुंग में जर्मनी के पास जो भी अधिकार हैं, वे सब जापान को दे दिए जाएं। यह एक ओर तो चीन के लिए लज्जा की बात थी, पर इससे चीन में राष्ट्रवादी भावनाओं को मज़बूती मिली।

30.4.2 बौद्धिक प्रतिक्रिया और जन-विरोध

इक्कीस मांगों के बाद से चीन के बौद्धिक वातावरण में काफी बदलाव आया। 1915 से नए विचारों और विश्वासों की आंधी-सी बड़े शहरी केंद्रों में आई, इन पर हमने इकाई 28 में चर्चा की है।

नए बौद्धिक वातावरण ने एक बड़ी घटना की पृष्ठभूमि तैयार की। जब से पेरिस में जनवरी में शांतुंग का मुद्दा उठा था, मुखर और राजनीतिक रूप से जागरूक जनता ने इस मामले में बहुत दिलचस्पी लेनी शुरू कर दी थी। शांतुंग को लेकर हुई सौदेबाजी में एक न्यायोचित शांति समझौते का उल्लंघन हुआ था, इसमें चीनी युवाओं की नई राष्ट्रवादी भावना का भी दमन हुआ था। अप्रैल 30, 1919 को पेरिस में जो निर्णय लिया गया उससे चीन में एक विस्फोटक स्थिति बनी रही जिसे चार मई के आंदोलन के नाम से जाना गया। इस आंदोलन का नेतृत्व छात्रों और बुद्धिजीवियों के हाथों में था। इस पर इकाई 27 और इकाई 28 में चर्चा की गई है।

चार मई को, दोपहर के थोड़ी देर बाद, तेरह संस्थाओं के कोई तीन हज़ार छात्र तियानान मेन चौक पर जमा हुए। वहाँ से उन्होंने स्थानीय पुलिस की चेतावनी के बावजूद लिगेशन (दूतावास) भवनों की ओर कूच कर दिया। संतरियों ने उन्हें अंदर जाने नहीं दिया। छात्र फिर दूसरी ओर मुड़ गए। उनका नारा था "चलो गद्दार के घर"। गद्दार से उनका आशय प्रधानमंत्री थान ची जुई और उसके भ्रष्ट और सिद्धांतहीन साथियों से था। छात्रों ने उनमें से कई के आवास पर हमले किए। उन्होंने उनमें से एक के घर को आग लगा दी और एक को निर्ममता से पीटा। एक और अधिकारी अपनी जान बचाकर दूतावास में घुस गया था, उसने उसी दिन त्यागपत्र दे दिया।

इस घटना ने विरोध के एक राष्ट्रव्यापी आंदोलन के उत्प्रेरक का काम किया। यह आंदोलन एक लंबे समय से फूटने की तैयारी में था। इसके तुरंत बाद अनेक छात्रों ने प्रदर्शनों, हड़तालों, कामबंद और एक जापान-विरोधी बहिष्कार आंदोलन का आयोजन शुरू कर दिया। इसमें सौदागरों, व्यापारियों और चीनी समाज के निम्न मध्यम वर्ग के लोगों ने छात्रों का साथ दिया। उन्होंने मिल कर यह मांग की कि पेरिस गए चीनी प्रतिनिधिमंडल को यह निर्देश दिया जाए कि वह शांति संधि पर हस्ताक्षर न करे। सरकार ने जुलूसों, भाषणों और संबंधित साहित्य के वितरण पर रोक लगा दी, लेकिन वह इस लहर को रोक नहीं पाई। तीन जून को पीकिंग में एक विराट प्रदर्शन हुआ, जिसमें एक हज़ार छात्रों को गिरफ्तार किया गया। पाँच जून को छात्रों ने तीन अधिकारियों को निकालने की मांग की, जो कथित तौर पर जापान समर्थक थे। अगले दिन गिरफ्तार छात्रों को रिहा कर दिया गया। शासन ने तीन दोषी अधिकारियों को भी निकाल दिया, और 12 जून को पूरे मंत्रिमंडल ने त्यागपत्र दे दिया।

पेरिस में शांति संधि पर हस्ताक्षर करने का दिन जैसे-जैसे पास आता गया, चीनी प्रतिनिधिमंडल के पास कोई सही या स्पष्ट निर्देश नहीं रह गए। सम्मेलन ने उसके इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया कि संधि में संशोधन के साथ हस्ताक्षर किए जाएं। अंत में, जब 28 जून को वर्साय की संधि सम्पन्न हुई तो अब तक बिना किसी आधिकारिक निर्देश वाले प्रतिनिधिमंडल ने अपने आपको अलग रखा। 10 जुलाई को जाकर ही, जब चीन की सरकार ने चीन की स्थिति के प्रति विश्व की सहानुभूति और देश के अंदर विरोध की मज़बूती का आकलन कर लिया तो अपने-अपने प्रतिनिधिमंडल को इस आशय के आदेश जारी किए कि वह संधि पर हस्ताक्षर न करे।

जून 1919 की अशांतिपूर्ण घटनाओं के फलस्वरूप पूरे चीन में अनेक संगठन बन गए, जिसकी अधिकांश प्रेरणा पीकिंग विश्वविद्यालय ने दी। जून के मध्य में शंघाई में एक चीनी छात्र संघ की स्थापना हो गई। एक और गुट "नव युवा समाज" था, जिसमें पीकिंग के शैक्षिक वर्ग के सदस्य थे। शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों से राष्ट्रवाद की जो भावना प्रधान बनी हुई थी उसे चार मई के आंदोलन से जबरदस्त गति मिली। इसीलिए, इस आंदोलन को आधुनिक चीनी राष्ट्रवाद के उदय का श्रेय जाता है।

चार मई के आंदोलन के बाद से राष्ट्रवाद ने पुराने किस्म के "समुद्री शैतानों" और "झबरों (या बाल वाबों)" (चीनियों द्वारा विद्रोहियों की पहचान) पर केंद्रित, विदेशवाद से नाता तोड़ लिया। अब यह आधुनिक राष्ट्रवाद की एक नई भावना की शुरूआत थी जिसका रूझान विदेशी-विरोधी से साम्राज्यवाद विरोधी की ओर था। अधिकांश एशियाई देशों में ये आवाज़ें उठने लगीं कि यूरोप और अमेरिका "गैर-श्वेतों" के प्रति भेदभाव को छोड़ें और राष्ट्रों की समानता और उन राष्ट्रों के नागरिकों के साथ समानता के व्यवहार के सिद्धांत को स्वीकार करें। हम पहले (इकाई 27 में) चीन की एकता पर, युद्ध सामंतवाद के खतरे पर भी चर्चा कर चुके हैं।

30.4.3 युद्ध सामंतवाद और चीन की एकता को खतरा

युआन शिकाइ की मृत्यु के बाद चीन में अस्थिरता और राजनीतिक फूट की स्थिति प्रबल रही। कई वर्षों तक दक्षिण चीन की अलग सरकार थी। पीकिंग सरकार के साथ उसे एक करने के प्रयास सफल नहीं हुए। युद्ध सामंतों के कई गुट अलग-अलग समयों पर पीकिंग सरकार पर हावी रहे। कुछ और प्रांत और प्रांतों के हिस्से भी जब-जब युद्ध सामंतों के कब्जे में रहे (देखिए इकाई 27)। इस आंतरिक कलह ने चीन की एकता को गंभीर रूप से खतरे में डाल दिया। दिलचस्प बात यह है कि सैन्यवादियों समेत ऐसे लोग जिनका राजनीतिक क्षेत्र में प्रभाव था हमेशा चीन के एकीकरण का समर्थन करते थे, जबकि उनमें से कोई भी इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अपनी निजी सत्ता को छोड़ने को तैयार नहीं था। क्षेत्रवाद और प्रांतवाद चीनी राष्ट्रवाद की राह का रोड़ा बन गये। उदाहरण के लिए, एक युद्ध सामंत ने तो यह नारा तक दे दिया कि "क्वांगतुंग क्वांगतुंगवासियों के लिए" हो। लेकिन पिछले भागों में चर्चित राष्ट्रवाद की धाराओं ने चीन को बंटवारे के संकट से बचा लिया।

30.4.4 चीनी राष्ट्रवाद के अतिरिक्त प्रभाव

चार मई की घटना चार मई का आंदोलन बन गई, क्योंकि शर्म, आक्रोश और चिढ़ से क्रांति की प्रेरक शक्ति और संभावना का जन्म हुआ। यह आंदोलन एक उत्प्रेरक था, जिसने व्यापक स्तर के संगठन को एक जगह इकट्ठा किया जिनमें छात्र, मज़दूर, सौदागर और संघ शामिल थे। उस अर्थ में यह आंदोलन राष्ट्रवाद की अखंडता को प्रतिबिम्बित करने वाला था। इसने तमाम चीनी बुद्धिजीवियों को नव संस्कृति दी, और इसने पश्चिम के तिरस्कार को भी बढ़ावा दिया। प्रथम विश्व युद्ध और उसके परिणामस्वरूप बनी स्थितियों ने यह स्पष्ट कर दिया था कि चीन को अपने आपको सांस्कृतिक रूप से अब और निम्न समझने की आवश्यकता नहीं थी। यदि नैतिक सिद्धांतों के लिए ज़ोर-शोर के साथ लड़े जाने वाले युद्ध से अनैतिक प्रस्ताव निकल कर आने थे तो पश्चिम को चीन की समस्याएँ बताने के लिए अपने खोखलेपन को भी दिखाना होता। लियांग ची जैसे लेखकों ने अपने लेखन के माध्यम से चीन के प्राचीन गौरव का निर्माण किया। यह चीनी राष्ट्रवाद की एक और पुरजोर अभिव्यक्ति थी।

अपने "चीनीपन" में चीनियों के इस नवीकृत गौरव बोध के अतिरिक्त, पश्चिम से नाता तोड़ने के कहीं अधिक प्रासंगिक कारण थे। यह इतिहास का संयोग रहा कि फिर से उठी इस चीनी क्रांति का संपर्क नई रूसी क्रांति से हुआ। वैसे तो चीन में विद्यमान पश्चिमी अधिकारियों का रवैया चार मई की क्रांति के प्रति कुछ अर्थों में सहानुभूतिपूर्ण रहा था, फिर भी पश्चिमी व्यापारियों ने इसे नए बोल्शेविकवाद की ही एक धारा माना। 1919 में, अंतर्राष्ट्रीय बस्ती के अधिकारियों ने अपने क्षेत्र से आंदोलन को साफ कर दिया। जनतंत्र का उपदेश देने वाले और उसके समर्थक होने का दावा करने वालों की इस कार्यवाही ने चीनियों के मन में और भी शंका भर दी और वे सोवियतों के और निकट आ गए। मार्च 1913 में, सोवियतों ने चीन में रूसी अधिकारों और विशेषाधिकारों को छोड़ दिया। इससे चीनियों का नए सोवियत राज्य के प्रति बहुत अनुकूल रवैया बन गया। शुरूआत में कई चीनी बुद्धिजीवियों की बोल्शेविक सिद्धांत में दिलचस्पी नहीं थी, लेकिन वे यह मानते थे, कि साम्यवाद के रूप में रूस के हाथ में एक ऐसा हथियार आ गया था, जिससे वह सैन्यवाद और साम्राज्यवाद का मुकाबला कर सकता था। इस तरह, मार्क्सवाद-लेनिनवाद में कुछ चीनियों को अंत में अपनी राष्ट्रवादी आकांक्षाओं की पूर्ति दिखाई दी। बाद में जब काफी बुद्धिजीवियों ने मार्क्सवाद को अपना लिया तो राष्ट्रवाद इसका एक अत्यंत महत्वपूर्ण तत्व बना रहा।

फ्रांस मे न केवल आदर्शवादी स्वच्छंदतावादी क्रांति और मानवाधिकारों को लेकर लौटने वाले छात्र ही आए, बल्कि दसियों हज़ार ऐसे मज़दूर स्वयंसेवी भी आए, जिन्होंने युद्ध में भाग लिया था। ये लोग मज़दूर वर्ग की पृष्ठभूमि से नहीं थे, बल्कि कम सम्पन्न परिवारों के छात्र थे। फ्रांस में उन्होंने जिस नस्लीय भेदभाव, भाषायी कठिनाइयों, कठोर व्यवहार और कम वेतन का अनुभव लिया था उससे उन्हें एकता और संगठन के मूल्य का सबक मिल गया था। नव संस्कृति आंदोलन तो छिन्न-भिन्न हो गया, लेकिन इसने जिस राष्ट्रवाद को जन्म दिया था, वह मज़बूत होता चला गया।

बोध प्रश्न 2

1) **उत्तर क्रांति काल के प्रारंभिक दौर में राष्ट्रवाद के दौर का संक्षिप्त विवरण दीजिए। उत्तर 15 पंक्तियों में दीजिए।**

2) **चीनी राष्ट्रवाद के क्या प्रभाव हुए? दस पंक्तियों में उत्तर दीजिए।**

30.5 सारांश

विदेशी ताकतों के हाथों अपमान और अधीनता झेलने के बाद, चीन में बीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में आधुनिक राष्ट्रवाद का उदय हुआ। साम्राज्यवाद विरोध, मांचूवाद विरोध और एक मज़बूत राष्ट्र की इच्छा—इन तीन कारकों ने राष्ट्रवाद के उदय को प्रेरित किया, लेकिन इन तीनों कारकों में साम्राज्यवाद विरोध का पहला कारक सबसे निर्णायक या महत्वपूर्ण था।

सन् 1911 और 1919 के बीच का जो दौर था, उसमें एक नवीकृत राष्ट्रवादी भावना दिखाई पड़ने लगी, जो जापान की इक्कीस मांगों के जवाब में थी। चीन जब पश्चिमी साम्राज्यवाद से निपटने का रास्ता निकालने के लिए घोर संघर्ष कर रहा था, उस समय चीन के संसाधनों के लिए भूखे जापान के एक पूर्वी साम्राज्यवादी ताकत के रूप में उदय ने तमाम चिंतनशील व्यक्तियों को झकझोर दिया। राष्ट्रवाद नई ऊँचाइयाँ छूने लगा। परंपरा से, पूर्वी एशियाई परिदृश्य में, जापान चीन का शिष्य था, जिसने उससे दर्शन, धर्म और लिपि जैसी अनेक बातें सीखीं और उधार ली थीं। चीनियों के लिए यह अभूतपूर्व आघात था कि 1894 से जापान का आक्रमक रवैया और भी तीव्र होता जा रहा था।

प्रारंभिक चिंगोत्तर काल में राष्ट्रवाद ने सभी वर्गों को प्रभावित किया। सौदागर, बुद्धिजीवी, छात्र और सेना सभी बाहरी शत्रु से लड़ने को एक हो गए। प्रथम विश्व युद्ध के विजेताओं ने पेरिस शांति सम्मेलन में शांतुंग मसले को जिस तरह से लिया, उससे एक आक्रामक और अदम्य राष्ट्रवादी भावना भड़क उठी। 1915 से जो बौद्धिक उबाल बन रहा था उसने युवाओं में एक सजग राष्ट्रवाद की भावना पैदा कर दी थी। चार मई की घटना चार मई का आंदोलन बन गया। इस व्यापक आंदोलन में प्रगाढ़ राष्ट्रवादी भावनाओं वाले सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक पहलू शामिल हुए। अंत में, पेरिए गए चीनी प्रतिनिधिमंडल ने संधि पर हस्ताक्षर नहीं किए। उसके बाद से चीन अपनी इस मांग से कभी नहीं मुकरा कि प्रभुसत्ता सम्पन्न राष्ट्रों के समुदाय में उसके साथ समानता का व्यवहार किया जाए या उसे समान दर्जा दिया जाए।

30.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) अपने उत्तर में **चुंग-कुओ** की इस अवधारणा को शामिल करें कि सम्राट "स्वर्ग का पुत्र" था, इत्यादि। देखिए भाग 30.1
2) इसकी तीन विवेचनाएँ हैं :
   i) साम्राज्यवाद का विरोध,
   ii) एक मज़बूत, आधुनिक राष्ट्र-राज्य का निर्माण; और
   iii) मांचू वंश को उखाड़ फेंकना। देखिए भाग 30.2

बोध प्रश्न 2

1) देखिए भाग 30.3
2) अपना उत्तर उपभाग 30.4.3 के आधार पर लिखिए।

1. न्यु यूथ पत्रिका का कवर पृष्ठ

2. लू-शुन

3. हु-शी

4. हुयान शींग

फैंग यू शीयांग

6. पू-यी
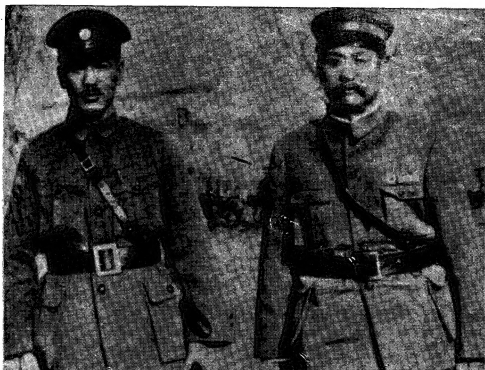
7. चआग-काइ-शेक और येन-शी-शान
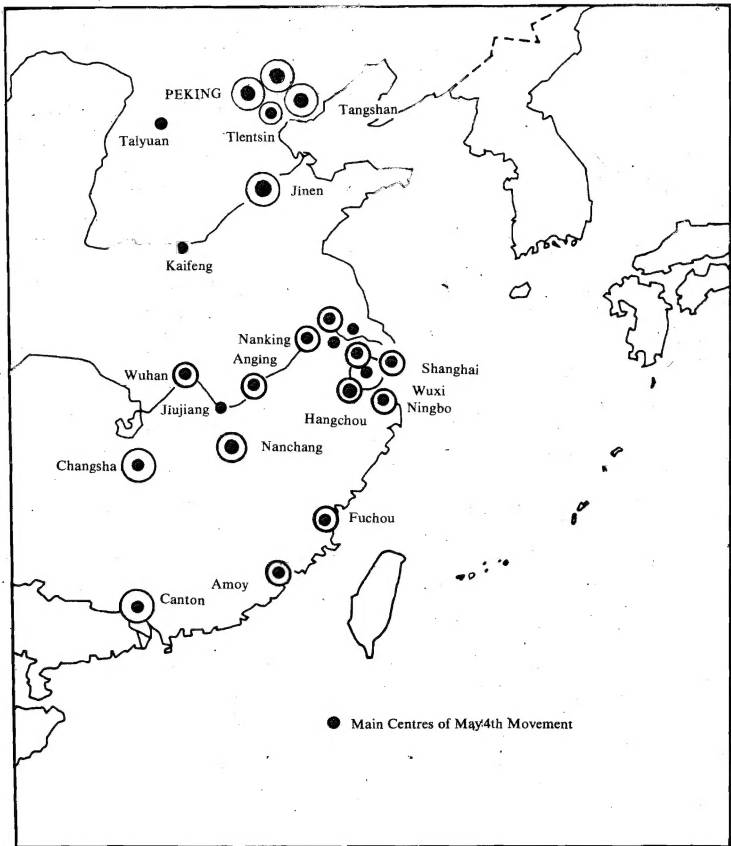
नक्शा-1 4 मई आन्दोलन के प्रमुख केन्द्र